शान्ति मन्दिर द्वारा प्रकाशित यह ई-पत्रिका आप सबको समर्पित है ।

सिद्ध मार्ग

© Shanti Mandir अप्रैल २०१२, संस्करण ८

सत्संग एक ऐसा विषय है, जिसमें विषय वही होता है, वक्ता अपने अनुभव अनुसार, बुद्धि अनुसार, उसके विचार अनुसार हमें समझाता है।

प्रिय आत्मन्, सप्रेम जय गुरुदेव! सिद्ध मार्ग ई-पत्रिका का आठवां अंक प्रस्तुत है । इस अंक में गुरुदेव महामण्डलेश्वर स्वामी नित्यानन्द जी द्वारा कुछ समय पूर्व राहता(शिर्डी) में दिए गये प्रवचन के सम्पादित अंश प्रस्तुत हैं ।

गुरुदेव का प्रवचन

सत्संग एक ऐसा विषय है, जिसमें विषय वही होता है, वक्ता अपने अनुभव अनुसार, बुद्धि अनुसार, उसके विचार अनुसार हमें समझाता है। हमारे दादागुरु थे अवधूत नित्यानन्द, वो कुछ बोलते ही नहीं थे, ऐसा कुछ लोग कहते है । क्योंकि कदाचित वे यह समझते होंगे, कौन सुनता है ? बोलकर क्या लाभ? इसलिए वे पड़े रहते थे, चलते थे और कोई ऐसा विचित्र मनुष्य आया तो उसको नारियल से मारते थे। लेकिन यदि उसका भाग्य होता था तो वह धीरे-धीरे उनके पास आता था । और फिर जो आशिर्वाद उसे प्राप्त होता था वह उसके जीवन में फलित होता था । वो क्या करते थे ये समझने के लिए लोग मुक्तानन्द बाबा के पास आते थे । कि

महापुरुष हमारे जीवन में आयेंगे और उनके आशिर्वाद, उनकी कृपा से मेरे जीवन का उद्धार होगा ये समझने के लिए भी बुद्धि चाहिए।

उन्होने हूँऽऽ बोला, नारियल मारा । फिर बाबा मुक्तानन्द उन्हे इस क्रिया का अर्थ समझाते थे। हम लोग अमेरिका में थे एक आदमी बाबा मुक्तानन्द के पास आया, बोला आपके गुरु को मिला, सामने खड़ा रहा, बहुत आशिर्वाद दिया । बाबाजी बोले बहूत अच्छा, बहूत भाग्यवान । पर कदाचित मेरे खयाल से उस व्यक्ति की समझ में नहीं आया कि उस सद्गुरु ने मुझे क्या दिया । महापुरुष हमारे जीवन में आयेंगे और उनके आशिर्वाद, उनकी कृपा से मेरे जीवन का उद्धार होगा ये समझने के लिए भी बुद्धि चाहिए । कभी कभी यहाँ शिर्डी आने पर विचार करता हूँ कि दुनियां में कोई ऐसा आध्यात्मिक, धार्मिक मनुष्य नहीं होगा जो शिर्डी और साईबाबा को नहीं जानता होगा । बहुत कम लोग होंगे जो शिर्डी इस नाम को नहीं जानते होंगे । फिर भी कभी कभी पास होते हुए भी हमें उसका महात्म्य समझ नहीं आता । हमारे मुक्तानन्द बाबाजी एक कथा कहते थे - एक मच्छीमार मनुष्य और एक माली ये दोनो दोस्त थे। वास्तविक इन दोनो में दोस्ती होती है या नहीं पता नहीं लेकिन कथा में इन दोनों की दोस्ती है । माली हमेशा मच्छीमार को कहता था कि तू मेरे घर रहने आ जा एक रात । एक दिन मच्छीमार चला जाता है । माली खुश हो जाता है कि मेरा मित्र आ रहा है तो वह अपना घर फूलों से सजा देता है । मच्छीमार उस स्वागत से प्रसन्न हो जाता है । रात को जब वहाँ सोता है तो उसे नींद ही नहीं आती । सिर दर्द करने लग जाता है । थोड़ी देर बाद बाहर आता है । माली से कहता है कमरा अच्छा है, फूल अच्छे हैं, सब कुछ अच्छा है लेकिन नींद नही आ रही और सिर दर्द कर रहा

हमें यह जीवन किसलिए प्राप्त हुआ है और मुझे इस जीवन में क्या करना है, जो कुसंग है वह छोड़कर मुझे सत्संग करना है।

है। माली समझ जाता है कि इसको मछली के गन्ध की आदत है। फूल की सुगन्ध, फूल का आनन्द इसके लिए कोई मायने नहीं रखता। माली मच्छीमार की मछली की टोकरी उसके पास रखता है जिससे उसका गन्ध उसे प्राप्त होता है। उसे नींद आती है और दूसरे दिन उठकर कहता है अच्छी नींद आयी। मुक्तानन्द बाबा कहते थे सामने वाले की कैसी आशा होती है हमें समझ नहीं आता क्योंकि चौरासी लाख योनियों से भटकते-भटकते कर्म करते-करते यह मनुष्य जन्म हमें प्राप्त होता है। मनुष्य जन्म मिला परन्तु उस मनुष्य जन्म में हम पशु व्यवहार करते हैं जैसे कि सुबह उठे, खाना खाया, नौकरी गये, शाम घर आये, टी.वी. देखे, कोई सिगरेट पीता है, कोई शराब पीता है, शाम को खाना खाया और सो गये। कभी कभी मैं विचार करता हूँ यह तो पशु भी करता है। सुबह उठता है तो वह भी जाता है जंगल में, उसे जो कुछ कमाना है वह कमाकर घर ले आता है, सबको खिलाता है और सूर्यास्त होने पर सो जाता है। सुबह उठकर फिर वही करता है। और मनुष्य जन्म मिलने पर हमने भी वही किया तो हममें मनुष्यत्व कहाँ है? हमें यह जीवन किसलिए प्राप्त हुआ है और मुझे इस जीवन में क्या करना है, जो कुसंग है वह छोड़कर मुझे सत्संग करना है। पर सत्संग भी दुर्लभ है सुलभ नही है। सत्संग होता रहता है परन्तु सत्संग में जाकर सत्संग समझना होता है। मुझे अभी किसीने बताया कोका-कोला पीने वाले लोगों को आप संतरे का रस या गन्ने का रस पीने को देते हो परन्तु उसकी जिह्वा को कोका-कोला का स्वाद रहता है। आप कोई

हमारे यहाँ ऐसी प्रथा है कि दर्शन होने के बाद दो मिनट बैठो । बैठो उस भगवान् को देखो, आने जाने वाले भक्तों को देखो और वहाँ का जो वातावरण है उसका आनन्द लो ।

भी रस पिलाएं पर उसे उस रस की समझ नही आयेगी । वह बोलेगा मुझे तो वही पसन्द है । सत्संग भी ऐसा ही है । सभी बैठकर अपने अपने विचार बताते है । हमारे विद्यार्थी भास्कर को मैं कभी कभी मज़ाक में कहता हूं कि हर एक-दो साल बाद उसके मन में आता होगा अब बस हो गया । क्योंकि सुबह चार बजे उठना, मन्दिर जाकर पूजा, अभिषेक, सन्ध्या करना, अध्ययन करना, शाम को फिर से मन्दिर जाना, लोगों से अच्छे से व्यवहार करना, अच्छे से बात करना, मन कभी कभी ऊब जाता है कि ये सब क्या है ? कभी कभी दो गाली देने का मन करता है पर आश्रम में नही दे सकते। और हमें कोई कुछ कहता है तो मुस्कराकर मान्य करना पड़ता है क्योंकि छोटे हैं कहना पड़ता है - ठीक है जैसा आप कहेंगे वैसा ही मैं करूंगा । एक समर्पण भाव से जीवन जीना पड़ता है । ये सब धीरे -धीरे हमारी आदत में आ जाता है। मैं हमेशा हरिपाठ के प्रथम चरण का स्मरण करता हूँ - देवाचीये द्वारी उभा क्षणभरी । ज्ञानेश्वर महाराज हमें यहाँ से शुरुआत करने को कह रहे है कि सर्वप्रथम जाकर उस भगवान् के द्वार पर खड़े तो रहो । हम तो जाते है और दर्शन किया की फट् से भाग जाते है कि छूट गये । हमारे यहाँ ऐसी प्रथा है कि दर्शन होने के बाद दो मिनट बैठो । बैठो उस भगवान् को देखो, आने जाने वाले भक्तों को देखो और वहाँ का जो वातावरण है उसका आनन्द लो । हमारे यहाँ मन्दिरों में और एक बात जो होनी चाहिये, जो होती नहीं है कि वहाँ जाकर वेदमन्त्र, कीर्तन यह सुनाई देना चाहिये । भगवान का नाम सुनाई देना चाहिये । लेकिन सुनाई क्या देता है - चलो, चलो,

सन्तजन कहते हैं कि भगवान् का ध्यान करो परन्तु भगवान् का ध्यान करने के लिए समय लगता है ।

चलो, यही सुनाई देता है । जिस भाव से मनुष्य जाता है, उसे वहाँ जाकर वह भाव जागृत हो जाना चाहिये । वह भाव जागृत होता नहीं क्योंकि सभी धक्का-मुक्की करते रहते हैं । धक्का सभी मारते हैं पर सभी कहते हैं कि वो धक्का मार रहा है पर हम भी कुछ कम नहीं हैं। सत्संग का रस हमें धीरे-धीरे समझ आने लगता है । जो अपना कुसंग का स्वभाव, अभ्यास, जो भी आप कहते है जो अपने अन्दर है, वह छूटने में समय लगता है । श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण समझाते है - ध्यायतो विषयान्पुन्सः संगस्तेषुपजायते। संगात्संजायते कामः कामाद्क्रोधोऽभिजायते । क्रोधात्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः स्मृतिभंशात् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ।।

महात्मा गांधी भी इस पर बहुत बोलते थे । मनुष्य एक वस्तु पर बहुत विचार करता है कि यह वस्तु मुझे चाहिये और विचार किए बगैर कोई वस्तु हमें प्राप्त नही होती । सन्तजन कहते हैं कि भगवान् का ध्यान करो परन्तु भगवान् का ध्यान करने के लिए समय लगता है । सर्वप्रथम इन्द्रियों के जो विषय हैं उनपर ध्यान करना चाहिये और वह इच्छा ऐसी होती है कि वह वस्तु यदि मुझे मिल गयी तो मुझे सुख की अनुभूति होगी और फिर विचार करते-करते एक दिन वह वस्तु हमें मिल जाती है । वस्तु मिलने पर यह मेरी है और इसका आनन्द मैं ही लूंगा दूसरा किसीको नहीं दूंगा ऐसी स्वार्थनीति में जीवन व्यतीत होता है । और जब उस वस्तु में इस प्रकार की कामना, आसक्ति, ममता होती है उस वजह से क्रोध उत्पन्न होता है । अपनी वस्तु कहीं चले जाने पर हमें दुख होता है ।

क्रोध हमारे जीवन में एक बहुत कष्ट देने वाली बड़ी वस्तु है।

लेकिन वस्तु के चले जाने पर यदि हम यह सोचें कि जितने दिन वह मेरी थी उतने दिन मैने उसका आनन्द लिया। अब मेरा और उसका सम्बन्ध समाप्त हो गया। छोड दो अब, ऐसा कोई सोचता है ? क्रोध हमारे जीवन में एक बहुत कष्ट देने वाली बड़ी वस्तु है। काम, क्रोध ये सब समझने के विषय हैं। लेकिन क्रोध को समझना आज के जमाने में हमारे लिए बहुत आवश्यक है। आसक्ति होगी, ममता होगी तो क्रोध आयेगा। एक लड़का था। उसे बहुत गुस्सा आता था। उसके पिता सोच रहे थे की इस लड़के को कैसे समझाए ? इसे समझना चाहिये कि ज्यादा क्रोध करना गलत है। वह अपने बेटे से कहता है कि जब-जब तुम्हे गुस्सा आये तब-तब बाहर जाकर एक लकड़ी का टुकड़ा था, उसपर एक कील ठोंक देना। डेढ़- दो महीने बाद उस लड़के ने देखा बहुत कील हो गयी। वह अपने पिता से आकर कहता है कि मेरे मन में ऐसा विचार आ रहा है कि क्रोध न करना अच्छा है। क्योंकि मुझे नही पता था कि मुझे इतना क्रोध आता है। पिता उसे कहता है, अब जिस दिन तुम्हे जरा भी क्रोध न आये, उस दिन जाकर एक कील निकाल लाना। ऐसा धीरे-धीरे वह सब कील निकाल देता है। जिस दिन उस लकड़ी के टुकड़े से सभी कीलें निकल जाती हैं, वह अपने पिता से आकर कहता है कि अब मुझे क्रोध नही आता। कम हो गया ऐसा कह सकते है। तब पिता कहता है चलो हम जाकर वह लकड़ी का टुकड़ा देखते हैं। वे लोग जाकर वह लकड़ी को देखते हैं और पिता प्रसन्न होते हैं कि अच्छा हुआ तुझे समझ आ गया कि

सत्संग में सन्तजनों ने उपदेश दिया और उस उपदेश को हमने समझ लिया इतना आसान नहीं है । धीरे-धीरे, सुनते-सुनते बुद्धि में परिवर्तन होने लगता है ।

क्रोध करना अच्छा नहीं है । परन्तु पिता अपने बेटे को उस लकड़ी के पास ले जा कर दिखाता है कि बहुत सारे छिद्र हुए हैं । जैसे उस लकड़ी पर छिद्र हुए हैं उसी प्रकार के छिद्र मनुष्य के हृदय में क्रोध के कारण होते हैं । पिता कहता है कि तूने क्रोध तो कम कर दिया है परन्तु उन छिद्रों का क्या करेगा जो तेरे व्यवहार के कारण उन लोगों के हृदय में हो गये है । बेटा अपने व्यवहार पर लज्जित हो जाता है । इसलिए भगवान् कहते है कि क्रोध नही करना चाहिए क्योंकि "क्रोधात् भवति सम्मोह ।" जब क्रोध आता है तब मनुष्य सब कुछ भूल जाता है । क्या सत्य है, क्या असत्य है, क्या करना चाहिए, क्या नही करना चाहिए सब भूल जाता है । वह लड़का उसी क्षण अपने मन में निश्चय कर लेता है कि मैं कभी भी क्रोध नही करूंगा । भगवान आगे कहते है- सम्मोहात् स्मृतिविभ्रमः । मनुष्य की स्मृति खो जाती है । हम सभी जानते हैं, कुछ हुआ तो हम कहते हैं कि उसने एक दिया तो मैंने दो दिये, उसने दो दिये तो मैंने चार दिये । उसको दिखा दिया। लेकिन विचार कीजिए यदि कोई घटना अपने जीवन में घटती है तो हम कितना विचार करते हैं कि मैं इसका बदला कैसे लूं । लेकिन अगर उसी समय हम यह विचार करें कि जो हुआ, हो गया छोड़ दो । कोई मेरा कर्म होगा, उसके फलस्वरूप मुझे यह कष्ट प्राप्त हुआ है । परन्तु यह इतना सरल नहीं है । मैं लोगों को हमेशा कहता हूँ, सत्संग में सन्तजनों ने उपदेश दिया और उस उपदेश को हमने समझ लिया इतना आसान नहीं है । धीरे-धीरे, सुनते-सुनते बुद्धि में परिवर्तन होने लगता है । समझ आती है कि

गुरु-चरणों में अपना भाव समर्पित करने से भगवान् अपने आप मिल जाता है।

गलत व्यवहार नहीं करना चाहिए। और जो स्मृति है, बुद्धि के साथ मिलकर उसका सदुपयोग करना चाहिए। नहीं तो स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशो। स्मृति गयी तो बुद्धि भी चली जाती है, विवेक भी चला जाता है। वेदांत कहता है नित्य अनित्य वस्तु विवेकः। जिज्ञासु को सर्वप्रथम यह बुद्धि हो कि सत्य क्या है, असत्य क्या है। नित्य क्या है, अनित्य क्या है। सत्य वह है जो वस्तुऐं हमारे जीवन में हैं और हमारे साथ जायेंगी। असत्य वह है जो हम यहीं छोड़ जायेंगे। अधिकांश बाह्य जीवन में जो वस्तुएँ हैं वह सब हम यहीं छोड़ जाते हैं। कोई कुछ लेकर नहीं जाता। फिर भी यह सब संग्रह करने में हम लगे रहते हैं। महाराष्ट्र के एक संत हुए वे कहते थे - अशाश्वत संग्रह कोण करी। सच में सन्तों की कृपा हो गयी बुद्धि जागृत हो गयी फिर यह सब अशाश्वत संग्रह कौन करेगा ? सन्तजन हमें समझाते हैं सुअवसर सभी के जीवन में आता है। लेकिन हमें उस सुअवसर का लाभ लेना आना चाहिए। हम पवित्र भाव से गुरु के समीप जाऐं और अपने आप को उसे समर्पित कर दें। लेकिन गुरु के पास रहना इतना आसान नहीं है। गुरु तो होते ही है परन्तु उनके साथ और भी लोग वहाँ होते हैं। उन सब से भी अच्छा सम्बन्ध बनाना होता है। तुकाराम महाराज कहते हैं - गुरु चरणी ठेविता भाव आपोआप भेटे देव। म्हणोनी गुरुसी भजावे स्वध्यानासी आनावे। देव गुरुपासी आहे वारंवार सागू काय। तुका म्हणे गुरु भजनी देव भेटे जी वनी। कि गुरु-चरणों में अपना भाव समर्पित करने से भगवान् अपने आप मिल जाता है। अतः गुरु का भजन करना चाहिए उसे स्व-ध्यान में लाना चाहिए। भगवान् गुरु के पास ही हैं।

। सद्गुरुनाथ महाराज की जय ।